विद्यापति (1360–1448)

प्रस्तुतकत्री
डॉ. सरोज पाठक
सहायक प्राचार्य
हिन्दी–विभाग
आर.डी.एस.कॉलेज, मुजफ्फरपुर

विद्यापति मिथिला के बिसपी गाँव में पैदा हुए थे। वे मिथिला के राजा कीर्तिसिंह और शिव सिंह के दरबारी कवि थे। उन्हें संस्कृत, अपभ्रंश और मैथिली भाषा का पूरा ज्ञान था। अपभ्रंश और मैथिली के तो वे श्रेष्ठ कवि थे। कीर्तिलता, कीर्तिपताका, भूपरिक्रमा, पुरूष परीक्षा, लिखनावली, शैव सर्वस्व सार, गंगावाक्यावली, विभागसार, पदावली आदि उनकी रचनाएँ हैं। इनमें भाषा की दृष्टि से कीर्तिलता और काव्य–सौन्दर्य की दृष्टि से पदावली विशेष लोकप्रिय है। कीर्तिलता कीर्तिसिंह के प्रीत्थ्यर्थ लिखी गयी तो पदावली स्वान्तः सुखाय और शिवसिंह लखमादेवी के प्रीव्यर्थ। एक ओर वे अपभ्रंश या अवह्ठ में लिख रहे थे तो दूसरी ओर मैथिली में। इससे पता चलता कि 14वीं शताब्दी के अन्त तक अपभ्रंश का स्थान देशभाषाएँ ले चुकी थी। देशभाषा में लिखी पहली रचना विद्यापति की पदावली है, अतः हिन्दी के पहले कवि विद्यापति ही ठहरते हैं।

विद्यापति की लेखनी से 'श्रृंगार और भक्ति रस ही नहीं, जीवन का मर्म और सार भी है। उन्होंने आज से करीब 600 साल पहले मातृभाषा के महत्व को समझना और लिखा– 'देसिल बयाना सब जन मिट्ठा', यानी अपनी भाषा सबको प्रिय होती है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं– ''श्रृंगार रस के सिद्ध वाक्कवि हैं।'' इसमें सन्देह नहीं कि श्रृंगार रस और भक्ति रस में मौलिक अंतर नहीं है किन्तु कवि को पहले भक्त होना चाहिए। विद्यापति को आचार्य शुक्ल भी श्रृंगारी कवि ही मानते हैं।' वे कहते हैं– ''विद्यापति को कृष्णभक्तों की परम्परा में न समझना चाहिए।'' जो लोग विद्यापति को आध्यात्मिक दृष्टि से देखना चाहते हैं, उन्हें आड़े हाथों लेते हुए वे लिखते हैं– 'आध्यात्मिक रंग के चश्मे आजकल बहुत सस्ते हो गए हैं, उन्हें चढ़ाकर जैसे कुछ लोगों ने 'गीत गोविन्द' को आध्यात्मिक संकेत बताया है वैसे ही विद्यापति के इन पदों को भी।''

विद्यापति की कविता का स्थापत्य शृंगारिक है। उसे आध्यात्मिक कहना खजुराहो के मंदिरों को आध्यात्मिक कहना है।

अपरूप के कविः–

विद्यापति का प्रेम न तो रोमैंटिकों की तरह वायवीय है और न भक्तों की तरह दिव्य। वे अपरूप के कवि हैं। इस अपरूपता में अद्‌भुत शक्ति है, तल्लीनता और अतृप्ति की गहरी क्षमता है। यह अपरूपता राधा में ही नहीं, कृष्ण में भी है–

'सुधामुख के विहि निरमल बाला

अपरूप रूप मनोभव–मंगल

त्रिभुवन विजयी माला।'

वे नखशिख, दूती प्रसंग, अभिसार आदि का पारंपरिक ढंग से वर्णन करते हैं। इसमें संदेह नहीं कि पदावली सामंती विलास को प्रज्वलित करनेवाली रचना है। विद्यापति के वे ही गीत मिथिला में गाए जाते हैं जो गृहस्थी से संबद्ध है। आज भी वे गीत बंगाल, असम और ओडिशा में भी उतने ही लोकप्रिय हैं, जितने बिहार में। मिथिला के लोग जहाँ–जहाँ गए, उनके साथ विद्यापति के गीत और संस्कार भी गए। बंगाल में चैतन्य महाप्रभु और ओडिशा में रामानंद राय विद्यापति से गहरे प्रभावित थे। कहा जाता है कि चैतन्य महाप्रभु तो उनके पदों को गाते–गाते विभोर हो जाते थे।

विद्यापति ने अपने पूर्ववर्ती मैथिली कवि उमापति को कोसों पीछे छोड़ दिया है। निराला ने उनकी मादकता को 'नागिन की लहर' कहा है। यह लहर रीतिकाव्य में नहीं मिलेगी।

मैथिली की मिठास, लोकधुनों का समावेश, तन्मयीभूत करने की अपनी क्षमता के कारण पदावली आज भी लोकप्रिय है और कल भी रहेगी। नगर अभिरूचि के बावजूद विद्यापति की रचनाओं में एक खुलापन है, साहस है, सौन्दर्योपभोग की ललक है, रूपदर्शन की अतृप्त व्यास है।